Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
January to March 2026, E-Journal, Vol. I, Issue LIII (53), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

श्री अरविंद घोष का क्रांतिकारी एवं राष्ट्रीय आंदोलन में योगदान

डॉ. अमित कुमार ताम्रकार*

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) PMCoE स्वामी विवेकानंद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – 'राष्ट्रवाद कोरा राजनीतिक कार्यक्रम नहीं है, राष्ट्रवाद ऐसा धर्म है जो ईश्वर की देन है। राष्ट्रवाद तुम्हारी आत्मा का संबल है। यदि तुम राष्ट्रवाद के समर्थक हो तो तुम्हें धार्मिक आस्था के साथ राष्ट्र की आराधना करनी होगी। तुम्हें यह याद रखना होगा कि तुम ईश्वर की योजना के निमित्त मात्र हो।' – श्री अरविंद

भारत के पुनर्जागरण के समग्र काल में राजा राममोहन राय से लेकर आज तक जितने भी महान् व्यक्तियों का आविर्भाव हुआ है, उन सबसे महर्षि अरविन्द–पांडिचेरी के सन्त का नाम अग्रगण्य है। छोटे व्यक्तियों का तो कहना ही क्या है, श्री रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद तथा महात्मा गांधी सरीखे महापुरुषों को भी भारत की आत्मा का इतना गहरा और विषद ज्ञान नहीं था जितना कि श्री अरविन्द को था। यही कारण है कि भारतीय पुनर्जागरण की आत्मा श्री अरविन्द में अन्य किसी भी भारतीय की अपेक्षा अधिक साकार हो उठी थी। रोमेन रोला ने उनको 'भारतीय विचारकों का राजा और एशिया तथा यूरोप की प्रतिभाओं का सर्वोत्कृष्ट समन्वय' कहकर पुकारा है। दिलीप कुमार राय उन्हें 'भारत का महानतम जीवित योगी' समझते थे। स्ट्रेन्डफोर्ड विश्वविद्यालय के डॉ. फ्रेड्रिक स्पीलबर्ग ने उन्हें इस 'वसुंधरा का पथ–प्रदर्शक तारा तथा हमारे युग का अवतार' कहकर पुकारा है। श्री अरविन्द की प्रतिभा सर्वतोमुखी थी, वे एक महान् कवि, एक महान् दार्शनिक, एक महान् विचारक, एक महान् ऋषि, भविष्य द्रष्टा तथा एक देशभक्त थे। उनका सन्देश केवल भारत के लिए ही नहीं वरन् संपूर्ण विश्व के लिए है। उस सन्देश की आज मानव जाति को सबसे अधिक आवश्यकता है।

श्री अरविंद का जन्म 15 अगस्त 1872 को हुआ था। यह कहने की तो आवश्यकता ही क्या है कि 15 अगस्त का स्वाधीनता दिवस के रूप में हमारे लिए एक विशेष महत्व है। श्री अरविंद के पिता डॉ. कृष्णाधन घोष पूर्णत: पाश्चात्य सभ्यता के रंग में रंगे हुए थे, अत: वे अपने पुत्र को भी एक पूर्णत: यूरोपीय शिक्षा प्रदान करना चाहते थेय इसलिए श्री अरविंद को पांच वर्ष की अवस्था में ही दार्जिलिंग में लॉरेटो कान्वेंट में भेज दिया गया। वहां से उन्हें इंग्लैंड भेजा गया जहां कि मैन्चेस्टर, लंदन तथा कैम्ब्रिज में उन्होंने 14 वर्ष व्यतीत किये। 1890 में वे इंडियन सिविल सर्विस की प्रतियोगिता परीक्षा में बैठे जिसमें उन्होंने ग्रीक तथा लैटिन में कीर्तिमान स्थापित किया। परंतु उन्हें सरकारी नौकरी पसन्द न थी और इसलिए घुड़सवारी की परीक्षा में जानबूझकर विफल होकर वे उसमें जाने से बच गए।

यद्यपि अरविंद का पालन–पोषण पूर्णतया पाश्चात्य ढंग से हुआ था, तथापि भीतर ही भीतर भारतीय संस्कृति से सम्बद्ध कुछ गंभीर तत्व उनके हृदय में काम करते रहे। परिणामतया इंग्लैंड में रहते हुए ही उनके हृदय में देशभक्ति और राष्ट्रवाद का भाव जागृत हुआ। आयरिश स्वतंत्रता संग्राम के बारे में उनके ज्ञान और मैजिनी तथा इटली के अन्य देशभक्तों की रचनाओं के उनके अध्ययन ने भी कुछ ऐसा ही प्रभाव डाला। कैम्ब्रिज में रहने के दौरान अरविन्द 'इंडिया हाउस' के सदस्य बन गये और कुछ समय के लिए वे उसके मंत्री भी रहे। इस संस्था के सदस्य के रूप में उन्होंने ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध जो भाषण दिए, उन्हें क्रांतिकारी कहा जा सकता है। अपने भाइयों के साथ वे 'दि लोटस एण्ड डैगर' नामक एक गुप्त संस्था के सदस्य बन गए और उन्होंने भारत की स्वतंत्रता के लिए कार्य करने की प्रतिज्ञा की।

आईसीएस में जाने से जानबूझ कर रह जाने के बाद श्री अरविंद ने बड़ौदा के गायकवाड़ के यहां नौकरी कर ली और वहां वे 1893 से 1906 तक रहे।1906 में उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेने के लिए बड़ौदा कॉलेज में अंग्रेजी के प्रोफेसर तथा वाइस–प्रिंसिपल के पद से त्याग पत्र दे दिया। श्री अरविंद का बड़ौदा में तेरह वर्षों का वास कई कारणों से महत्वपूर्ण है। वहां उनका पुनर्राष्ट्रीयकरण हुआ। उन्होंने संस्कृत का अध्ययन किया और प्राचीन भारतीय संस्कृति तथा भारत की आत्मा का दर्शन किया। वे भारतीय राजनीति में भाग लेने लगे और साथ ही साथ योगाभ्यास भी करने लगे। उनकी राजनीति प्रारंभ से ही एक योगी की राजनीति थी। बड़ौदा में उन्होंने गुजराती और मराठी सीखी और बंकिम चंद्र चटर्जी की रचनाओं तथा मधुसूदन दत्त के काव्य का अध्ययन किया। इन महान् लेखकों तथा वाल्मीकि और कालिदास की रचनाओं के अध्ययन के फलस्वरुप ही उन्होंने भारत की आत्मा का अंतर्दर्शन प्राप्त किया। योग की विद्या उन्होंने विष्णुभास्कर लेले से प्राप्त की जिसने उन्हें मन को समस्त मानसिक सामग्री से रिक्त करके दिव्य चेतना से संपर्क स्थापित करना सिखाया। तदोपरांत श्री अरविंद ने दिव्य शक्ति के निर्देशन के अनुसार आचरण करना आरंभ कर दिया। उन्होंने अनुभव किया कि मैं जो भी कार्य कर रहा हूं वह परमात्मा का है मेरा अपना नहीं है। यह बात उन्होंने अपनी पत्नी को एक पत्र में लिखी। योगाभ्यास के फलस्वरुप वे अपने जीवन लक्ष्य के प्रति और भी अधिक सचेत हो गए। अब वे कोई भी कार्य अपनी इच्छानुसार नहीं वरन् परमात्मा की इच्छा के अनुसार करते थे। ईश्वर की इच्छा के प्रति इतना पूर्णत: समर्पित कोई भी व्यक्ति राजनीतिक क्षेत्र में न तो उनसे पहले आया था और न बाद में।

प्रारंभ में तो श्री अरविन्द ने राजनीति में भाग केवल अप्रत्यक्ष रूप से ही लिया। उन्होंने मुंबई से प्रकाशित होने वाले एक आंग्ल–मराठी समाचार

पत्र 'इंदु प्रकाश' में पत्र लिखे। उन पत्रों का शीर्षक होता था 'न्यू लैंम्पस फॉर ओल्ड' (New Lamps for Old) वे पत्र अनाम होते थे और उनमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की नीतियों की कटु आलोचना की जाती थी। इन लेखों ने जनता में बड़ी हलचल उत्पन्न कर दी। ऐसी तीक्ष्ण और ओजपूर्ण सामग्री तो इससे पूर्व कभी प्रेस में प्रकट नहीं हुई थी। महादेव गोविंद रानाडे ने इन्दु प्रकाश के सम्पादक को ऐसे उत्तोजक लेख प्रकाशित न करने की सलाह दीय फलतरू श्री अरविंद ने लिखना बंद कर दिया।

एक बार श्री अरविंद बड़ौदा से छुट्टी लेकर बंगाल की स्थिति का अध्ययन करने तथा यह देखने के लिए गए कि वहां एक वास्तविक राष्ट्रीय आंदोलन की क्या संभावनाएं थीं। वहां उन्होंने जनगण को नैराश्य तथा अवसाद की स्थिति में पाया। उन्होंने बड़ौदा सेना के एक बंगाली सैनिक को एक कार्यक्रम देकर भेजा। उनकी योजना यह थी कि प्रत्येक नगर में ऐसे केंद्र स्थापित किए जायें। जो कि गुप्त रूप से और जहां संभव हो वहां खुले रूप से भी, क्रांतिकारी प्रचार करें। 1902 में उन्होंने अपने छोटे भाई वीरेंद्र कुमार को उस बंगाली सैनिक जतीन बनर्जी की सहायतार्थ भेजा। वे दोनों साथ-साथ कार्य नहीं कर सकें, इससे क्रांति के लक्ष्य को बड़ा धक्का लगा। श्री अरविन्द पंडित बाल गंगाधर तिलक के संपर्क में भी आए जिन्होंने कि उनको महाराष्ट्र में अपनी योजना समझाई। बड़ौदा कॉलेज में वाइस-प्रिंसिपल के पद पर रहते हुए ही वे अपने अवकाश काल में बंगाल में क्रांति का प्रचार करते रहे। स्वदेशी का प्रचार उनके क्रांतिकारी कार्यक्रम का एक अभिन्न अंग था। इस प्रसंग में यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि श्री अरविंद द्वारा संगठित क्रांतिकारी संस्थाओं के बहुत से अग्रगण्य नेता गीता के उपासक योगी थे। क्रांतिकारी विचारों पर आध्यात्मिकता की बड़ी गहरी छाप थी।

महाराजा बड़ौदा की नौकरी में रहते हुए भी श्री अरविंद ने कांग्रेस के अहमदाबाद 1902, मुंबई 1904 तथा बनारस 1905 अधिवेशनों में भाग लिया। इन सभी अधिवेशनों में उन्होंने नेताओं से पूर्ण स्वाधीनता को अपना लक्ष्य बनाने तथा ब्रिटिश शासन के साथ कोई समझौता न करने के लिए प्रेरित करने का प्रयास किया, लेकिन 1905 में बंगाल विभाजन के पश्चात् हुए व्यापक आंदोलन ने उन्हें राष्ट्रीय आंदोलन में प्रत्यक्ष भूमिका निभाने के लिए प्रेरित किया। जून 1906 में वे बड़ौदा से असीमित काल की छुट्टी लेकर बंगाल लौट आये। सन् 1906 में उन्होंने 'बारीसाल सम्मेलन' में भाग लिया, जहां उन्होंने 'वंदे मातरम्' के नारे का चमत्कारिक प्रभाव और ब्रिटिश राज की घोर अमानवीयता भी देखी। अब वे अल्प वेतन पर नव स्थापित 'नेशनल कॉलेज' के प्रिंसीपल बन गये। अब वे बंगाल में राष्ट्रवादी शक्तियों के अग्रणी नेता बन गए। सन् 1906 में ही वे 'वंदे मातरम्' के सह-सम्पादक बन गये, जिसे विपिनचंद्र पाल ने उसी समय निकालना प्रारंभ किया था। जिसका उद्देश्य था कि 'जनता में स्वाधीनता के आदर्श के प्रति आस्था उत्पन्न करना।' सन् 1906 से 1910 तक का उनका राजनीतिक जीवन उल्का के समान तेजस्वी सिद्ध हुआ और वे राष्ट्रवादी दल के प्रतिष्ठित नेता बन गये।

सरकार ने बंग-भंग के विरुद्ध चल रहे आंदोलन को कठोरता से कुचलने का प्रयास किया और उसकी अत्यधिक दमनकारी नीति के फलस्वरुप बंगाल में 'बम की नीति'(Cult of the Bomb) का आविर्भाव हुआ।जनवरी 1908 में कलकत्ता के एक उपनगर मानिकतल्ला के एक बाग में बम बनाने का एक कारखाना खोला गया।उसी वर्ष बारीन्द्र कुमार के दल ने मुजफ्फरनगर के बदनाम जिला न्यायाधीश किंग्सफोर्ड के वध के लिए खुदीराम बोस और प्रफुल्ल चाकी को नियुक्त कियाय किंतु उन दोनों ने धोखे से किंग्सफोर्ड की जगह कैनेडी परिवार की दो अंग्रेज महिलाओं पर बम फेंक दिया और वे मर गयीं। प्रफुल्ल चाकी ने गिरफ्तारी से बचने के लिए आत्महत्या कर ली, खुदीराम बोस पर मुकदमा चलाया गया और उन्हें फांसी की सजा दी गयी।

मुजफ्फरनगर की घटना के बाद मानिकतल्ला के बम कारखाने का रहस्य खुल गया और बारीन्द्र कुमार, अरविंद घोष, कन्हाईलाल आदि अनेक क्रांतिकारी गिरफ्तार कर लिये गये। अलीपुर जेल में उन पर मुकदमा चलाया गया। उसी दौरान कन्हाईलाल ने अपने एक साथी नरेंद्र गोस्वामी की जो मुखबिर बन गया था, जेल में ही हत्या कर दी। कन्हाईलाल को भी फांसी दी गयी।

अलीपुर जेल के मुकदमे में बारीन्द्र कुमार तथा उनके अनेक साथियों को काला पानी का दण्ड दिया गया। अरविन्द घोष छूट गए।अलीपुर जेल में एक वर्ष के कारावास में श्री अरविन्द के जीवन के प्रति दृष्टिकोण में जबरदस्त परिवर्तन कर दिया।अलीपुर जेल में श्री अरविंद को कुछ अनुभूतियां हुई। उन्हें सर्वत्र श्री कृष्ण के दर्शन हुएय उनकी कोठरी के सामने खड़ा हुआ वृक्ष भी उन्हें श्री कृष्ण के रूप में ही दिखाई देने लगा। मैंने अपनी कोठरी की शलाखाओं की ओर देखा और मुझे द्वार पर वासुदेव दिखाई दिये। मेरे लिए प्रहरी का कार्य नारायण कर रहे थे।

अलीपुर जेल से छूट कर आ जाने पर श्री अरविंद ने अपने पुराने कार्यक्रम को चलाने का निश्चय कियाय परंतु जनता में पहले जैसा उत्साह नहीं रह गया था। उन्होंने कर्मयोगी तथा धर्म नामक दो साप्ताहिक पत्रिकायें निकालनी प्रारंभ की। परंतु सरकार को यह सब कुछ पसंद नहीं था। सन् 1909 में सिस्टर निवेदिता को विश्वस्त सूत्र से ज्ञात हुआ कि अरविंद पुन: गिरफ्तार होने वाले हैं और इस बार उन्हें देश निष्कासन का दंड मिलेगा। इस सूचना के प्राप्त होने पर अरविंद ने देशवासियों के नाम एक खुली चिट्ठी प्रकाशित की जिसे उनका अंतिम राजनीतिक वसीयतनामा कहा जा सकता है और वह राजनीति से सन्यास लेकर फरवरी 1910 में गुप्त रूप से चंद्रनगर की फ्रांसीसी बस्ती में चले गये।वहां कुछ दिन रहने के उपरांत वे एक फ्रांसीसी स्टीमर में सवार होकर 4 अप्रैल 1910 को पांडिचेरी पहुंच गये।पांडिचेरी पहुंच कर अरविंद योग-साधना में तल्लीन हो गये और उन्हें यह अनुभव होने लगा कि यह आध्यात्मिक कार्य बहुत महान् है तथा उसमें उन्हें अपनी सारी शक्ति लगा देनी चाहिए।

पांडिचेरी पहुंचकर श्री अरविन्द अधिकाधिक योग में व्यस्त रहने लगे और उन्होंने समस्त बाह्य राजनीतिक क्रियाकलाप का परित्याग कर दिया। उन्होंने कई बार कांग्रेस का अध्यक्ष बनने तथा यहां तक कि रामकृष्ण शताब्दी समारोह का सभापतित्व बनने तक से इन्कार कर दिया। उन्होंने बंगाल में उन क्रांतिकारी शक्तियों, जिनका कि स्वयं उन्होंने नेतृत्व किया था से सभी प्रकार का संबंध-विच्छेद कर लिया। ऐसा उन्होंने इसलिए किया क्योंकि उन्हें यह दृढ़ विश्वास हो गया था कि बिना किसी सशस्त्र क्रांति के भारत का स्वाधीन हो जाना निश्चित है। इस लक्ष्य की प्राप्ति विश्व में क्रियामान् शक्तियों द्वारा होनी थी।

परंतु भारत में तथा समग्र विश्व में चल रहे घटनाक्रम के ऊपर उनकी दृष्टि लगी रही और आवश्यकता पड़ने पर उन्होंने आध्यात्मिक स्तर पर हस्तक्षेप भी किया। वे स्वयं कहते हैं कि उन्होंने द्वितीय विश्व-युद्ध में उस समय हस्तक्षेप किया जबकि उन्होंने यह देखा कि हिटलर उन समस्त शक्तियों

को कुचल देगा जो कि उसका विरोध कर रही थी और नाजीवाद सम्पूर्ण विश्व पर छा जायेगा। आंतरिक रूप से उन्होंने अपनीआध्यात्मिक शक्ति मित्र राष्ट्रों के पीछे उस समय लगाई जबकि उनकी डन्कर्क में भारी पराजय हो गई थी, और जबकि प्रत्येक व्यक्ति इंग्लैंड की तुरंत पराजय और हिटलर की निश्चित विजय की आशा कर रहा था। श्री अरविन्द के आध्यात्मिक हस्तक्षेप करते ही जर्मन विजय का प्रवाह एकदम रुक गया और मित्र राष्ट्रों की विजय होने लगी। श्री अरविन्द ने ऐसा इसलिये किया क्योंकि उन्होंने देखा कि हिटलर तथा नाजीवाद के पीछे अंधकारपूर्ण आसुरी शक्तियां काम कर रही थीं।

पांडिचेरी में श्री अरविंद ने योग की तीव्र साधना की और अनेक महान् कृतियों की रचना की जिनमें से विशेषत: उल्लेखनीय है : The Life Divine, Essays on Gita, The Synthesis of Yoga, The Ideal of Human Unity, Defence of Indian Culture. उनकी कुछ अन्य रचनाएं हैं : Renaissance in India, Bankim-Tilak, Dayanand, The Basis of Yoga, Riddle of the World उनकी काव्यात्मक रचनाओं में सर्वोच्च स्थान उनके महाकाव्य 'सावित्री' (Savitri) का है।

अपने जीवन के अंतिम वर्षों में श्री अरविंद के गुर्दे में रोग हो गया। बहुत दिनों तक उन्होंने उसे नियंत्रित रखा, किंतु अंत में 2 दिसंबर 1950 ई. को उन्होंने इस संसार को त्याग कर दिव्य लोक को प्रस्थान किया। उनकी महासमाधि के अवसर पर डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने इन शब्दों में अपना उदगार प्रगट किया था– 'वे प्राचीन ऋषियों की भांति साहसी और निर्भीक विचारक थे। वे जो संदेश छोड़ गये हैं, आध्यात्मिकता की जो सुवास बिखेर गये हैं, वह न केवल देश की आने वाली पीढ़ियों को, वरन् सारे संसार को प्रेरणा देती रहेगी। भारत इनकी स्मृति की पूजा और प्रतिष्ठा करता रहेगा और उन्हें अपने महान् मुनियों और देवदूतों में स्थान देगा।'

'सत्य को जीतना बड़ा कठिन और दु:साध्य है। इस जीत के लिए मनुष्य को सच्चा योद्धा होना होगा– ऐसा योद्धा जो किसी चीज से भय नहीं करता, न तो शत्रुओं से और न तो मृत्यु से, क्योंकि यह संघर्ष सबके साथ और सबके विरुद्ध, शरीर के सहित और शरीर के बिना चल रहा है और इसका अंत परम विजय में होगा।' – श्री अरविंद

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सूद, प्रो. ज्योति प्रसाद, प्रमुख राजनीतिक विचारक, के. नाथ एण्ड कंपनी मेरठ, वर्ष 1982–83.
2. जैन, डॉ. पुखराज, राजनीति विज्ञान, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा वर्ष 2002.
3. दुबे, सत्यनारायण, इतिहास, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कंपनी, इंदौर
4. शर्मा, अरुण दत्त, भारतीय राजनीतिक विचारक, यूनिक पब्लिशर्स, नई दिल्ली, वर्ष 2009
5. सेठ, कीर्ति देवी, भारतीय शिक्षा–दार्शनिक, वैदिक प्रकाशन, इलाहाबाद, वर्ष 1960
6. सिंह, डॉ. शिव प्रसाद, उत्तर योगी, श्री अरविंद जीवन और दर्शन, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, वर्ष 1972
7. गाबा, ओमप्रकाश, राजनीतिक–चिंतन की रूपरेखा, मयूर पेपरबैक्स प्रकाशन, नोएडा, वर्ष 2003

****